Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 19, Issue No. 1, January-2022, ISSN 2230-7540

भारत में स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली और चिकित्सा प्रणाली

Amit Kumar[1]*, Prof. Dr. Pramod Kumar[2]

[1] Research Scholar Department of Humanity Capital University Jharkhand

[2] Director and Dean -Academic-Capital University Koderma Jharkhand

सार - यह अध्ययन उत्तर बंगाल की स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली पद्धतियों पर यह अध्ययन किया गया है जिसमे उत्तर बंगाल पर्यावरण कारक में रोगो का निदान और भारत स्वदेशी चिकित्सा नीति रोकथाम के लिए क्या क्रियान्वय किया गया उनका सामजिक और आर्थिक रूप से उत्तर बंगाल में चिकित्सा नीति का क्या प्रभाव रहा है तथा प्राचीन इतिहास में कैसे स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली को अपनाया गया है भारत के अन्य सभी हिस्सों के साथ उत्तर बंगाल के क्षेत्र में स्वास्थ्य सेवाओं के बुनियादी ढांचे और देखभाल के उपयोग के पैटर्न में मौलिक बदलाव आया है। इस तथ्य की जांच से कुछ महत्वपूर्ण बदलावों का के बारे में जानकारी प्राप्त होती है वर्तमान में स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली में क्या बदलाव आ रहे है वर्तमान अध्ययन उत्तर बंगाल , भारत के कूचबिहार और जलपाईगुड़ी जिलों के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में विभिन्न स्वास्थ्य देखभाल के उपयोग की दिशा में विभिन्न सामाजिक-आर्थिक , जनसांख्यिकीय, भौगोलिक और अन्य कारकों के योगदान का मूल्यांकन है ।

कीवर्ड - भारत में स्वास्थ्यए देखभाल प्रणालीए चिकित्सा प्रणाली

----------X----------

प्रस्तावना

डब्ल्यूएचओ की पारंपरिक चिकित्सा रणनीति राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्रणालियों में पारंपरिक और पूरक चिकित्सा (टी एंड सीएम) के एकीकरण की सिफारिश करती है। 1983 में भारत की पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति ने औपचारिक रूप से मान्यता दी कि भारतीय चिकित्सा प्रणाली (ISM) सार्वजनिक स्वास्थ्य देखभाल में योगदान दे सकती है और प्ैड को स्वास्थ्य सेवा वितरण प्रणालियों में एकीकृत करने के प्रयासों की सिफारिश की। हालांकि अगले दशक में बहुत कम किया गया था , 1995 में भारतीय चिकित्सा प्रणाली और होम्योपैथी विभाग (आईएसएम एंड एच) की स्थापना की गई थी। 2003 में, इसका नाम बदलकर आयुष विभाग कर दिया गया , जो आयुर्वेद , योग, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी चिकित्सा प्रणालियों का प्रतिनिधित्व करने वाला एक संक्षिप्त नाम है। पिछले कुछ वर्षों में भारत के अन्य सभी हिस्सों के साथ उत्तर बंगाल के क्षेत्र में स्वास्थ्य सेवाओं के बुनियादी ढांचे और देखभाल के उपयोग के पैटर्न में मौलिक बदलाव आया है।

इस तथ्य की जांच से कुछ महत्वपूर्ण बदलावों का खुलासा होगा जैसे कि उपयोगकर्ता शुल्क की शुरूआत या सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं में शुल्क संरचना में अधिक विशेष रूप से वृद्धि , देखभाल के कई निजी स्रोतों का उदय , और ग्रामीण और शहरी के बीच चिकित्सा की वैकल्पिक प्रणालियों के लिए प्राथमिकता का पता चला। द्रव्यमान। इस बिंदु पर महत्वपूर्ण शोध प्रश्न यह हैं कि क्या सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं की मांग में कमी आई है या एलोपैथी पर वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों के लिए वरीयता बढ़ गई है या क्या सामाजिक-आर्थिक , जनसांख्यिकीय और अन्य विशेषताओं के जवाब में देखभाल के लिए रोगी की प्राथमिकता पूरी तरह से कठोर है। वर्तमान अध्ययन उत्तर बंगाल , भारत के कूचबिहार और जलपाईगुड़ी जिलों के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में विभिन्न स्वास्थ्य देखभाल के उपयोग की दिशा में विभिन्न सामाजिक-आर्थिक , जनसांख्यिकीय, भौगोलिक और अन्य कारकों के योगदान का मूल्यांकन है आयुष प्रणाली काफी हद तक संहिताबद्ध प्रणालियां हैं जो समय के साथ चुनिंदा संस्थागत और पेशेवर बन गई हैं। देश में कई मेडिकल कॉलेज आयुष प्रणाली में स्नातक और स्नातकोत्तर प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। इन संस्थागत पारंपरिक प्रणालियों को भारत में श्पेशेवर क्षेत्रश् के हिस्से के रूप में माना जा सकता है यदि कोई क्लेनमैन के वर्गीकरण का उपयोग करता है। लेकिन पारंपरिक

www.ignited.in

चिकित्सा के पेशेवर रूप देश में मौजूद एकमात्र पारंपरिक प्रणाली नहीं हैं। गैर-पेशेवर क्षेत्र में गैर-संहिताबद्ध प्रणालियां शामिल हैं जिन्हें क्लेनमैन द्वारा लोक क्षेत्र कहा जाता है। भारत में, इन प्रणालियों को नीति दस्तावेजों में तेजी से स्थानीय स्वास्थ्य परंपराओं (एलएचटी) के रूप में संदर्भित किया जा रहा है। LHT एक व्यापक पदवी है जिसका उपयोग घरेलू उपचार और लोक उपचारकर्ताओं को शामिल करने के लिए किया जाता है।

पारंपरिक चिकित्सा

आयुर्वेद का ज्ञान हमारे देश में बहुत प्राचीन काल से है। दुनिया के प्राचीनतम ग्रंथ वेदों में से ही आयुर्वेद निकला है। अपने शरीर को स्वस्थ बनाये रखने की पद्धति और अनेक तरह के रोगों की चिकित्सा और उनसे बचने का ज्ञान तथा स्वस्थ रहते हुये लंबी आयु बनाये रखने के ज्ञान को ही आयुर्वेद कहा गया है। हमारे जन्म के साथ ही अथवा इस पृथ्वी पर जन्म लेने के बाद से ही शरीर में कोई ना कोई रोग लगा ही रहता है। और जैसे-जैसे शरीर में वृद्धि होती है। वैसे-वैसे रोगों में भी वृद्धि होती रहती है। रोग भी हजारों तरह के होते हैं, इसलिये -- भारतीय दर्शन में रोगियों की देख रेख करना और उन्हें दवाई देना एक सेवा का कार्य माना गया है। भारतीय सभ्यता में दूसरों की सेवा करना ईश्वर की सबसे बड़ी भक्ति मानी गयी है।

इतिहास

शब्द के अर्थ तथा इतिहास के अनुसार यथेष्ट काल तक चिकित्सा केवल रोगों को दूर करनेवाले उपचारों की संगृहीत विद्या थी। इसमें साधारण शल्यकर्म और प्रसवकर्म तक के लिये कोई स्थान नहीं था तथा लोकस्वास्थ्य की तो कल्पना भी असंभव थी। अति प्राचीन काल में चिकित्सा की नींव ऐसे उपचारों पर पड़ी, जिनमें रोगहरण के लिये भूत प्रेतों की बाधा को दूर करना आवश्यक समझा जाता था। इन उपचारों से शरीर की अवस्था अथवा उसके घावों इत्यादि का कोई संबंध नहीं होता था। कभी-कभी चिकित्सक अनुभवसिद्ध ओषधियों का प्रयोग भी करते थे। कालांतर में ज्ञात ओषधियों की संख्या बढ़ती गई और झाड़ फूँक के प्रयोग ढीले पड़ने लगे। ईसा से 500 वर्ष पूर्व के, मिस्र देश स्थित पिरामिडों से प्राप्त ष्ईबर्स पैपाइरस (म्इमते चंचलतने) नामक लेख ऐसे ही समय का प्रतीक है।

चिकित्सा में पहला व्यापक परिवर्तन बुद्धपूर्व भारत की दिवोदास सुश्रुत परंपरा द्वारा हुआ। इसमें ओषधियों के प्रयोग के साथ साथ शवों के व्यवच्छेदन से प्राप्त ज्ञान का उपयोग प्रारंभ हुआ और दोनों प्रकार की चिकित्साओं को एक ही पंक्ति में रखा गया। इस परंपरा के प्रख्यात चिकित्सकों में बुद्धकालीन जीवक का नाम उल्लेखनीय है, जिन्होंने शल्यकर्म और वैद्यक को समान महत्व देकर उन्हे पूर्णतरू समकक्ष बनाया। इसके पश्चात् अनेक भारतेतर देशों ने भी शल्यकर्म को चिकित्सा का अभिन्न अंग बनाना आरंभ किया तथा इसी प्रसंग में प्रसवकर्म भी चिकित्सा के भीतर आया।

ईसा पूर्व 460 वर्ष के पश्चात् विख्यात चिकित्सक हिपाक्रेटिज हुए, जिन्होंने चिकित्सा को धर्मनिरपेक्ष तथा पर्यवेक्षणान्वेषणमुखी व्यापक व्यवसाय बनाया। मिस्र का सिकंदरिया नामक नगर उस समय इस विद्या का केंद्र था। यहाँ इस परंपरा को 200 वर्षों तक प्रश्रय मिला, किंतु इसके बाद यह लुप्त होने लगी। ईसा पश्चात् 1400 वर्ष तक धर्मांधता के प्राबल्य के कारण वैज्ञानिक चिकित्सा का विस्तार नगण्य रहा, किंतु यूरोप के पुनर्जागरण पर विज्ञान की चतुर्दिक् वृद्धि होने लगी, जिसने चिकित्सा को विशालता दी तथा विभिन्नताओं को हटाया।

चिकित्सा की शाखाएँ

प्राचीन काल में मनुष्य सूर्यप्रकाश, शुद्ध हवा, जल, अग्नि, मिट्टी, खनिज, वनस्पतियों की जड़, छाल, पत्ती आदि द्रव्यों से अनुभव के आधार पर चिकित्सा करता था। इनके गुणधर्म उसे मालूम न थे। इसी प्रकार, रोगों का ज्ञान न होने से, वे रोगों के उत्पन्न होने का कारण देवताओं का कोप समझते थे और उन्हें प्रसन्न करने का मंत्र-तंत्रों से प्रयत्न करते थे। पीछे जैसे जैसे रोगों का ज्ञान बढ़ा, दैवी चिकित्सा का जोर घटता गया और आनुभविक चिकित्सा का विस्तार होता गया। पीछे मैर्केज़ी (डंबामद्रपम), कोख (ज्ञवबी), एरलिच (म्ीतसपबी) इत्यादि के परिश्रम और सूक्ष्म अवलोकन से आनुभविक चिकित्साद्रव्यों की मूलकता सिद्ध हो गई और अनेक नए द्रव्य आविष्कृत हुए। 20वीं शताब्दी तक चिकित्सा बहुत अधिक विकसित हो गई। आज चिकित्सा की अनेक शाखाएँ बन गई हैं, जिनमें निम्नलिखित विशेष उल्लेखनीय हैं रू

- **रोगनिवारक चिकित्सा**

इसमें स्वच्छता, जलशोधन, मोरीपनाले के पानी और मल का विनाश, मक्खी, मच्छर तथा रोगवाहक अन्य कीटों का विनाश, रोगियों को अलगाया जाना, विसूचिकादि रोगों के टीके, त्रुटिजन्य रोगों के लिये त्रुटि द्रव्यों का वितरण, यक्ष्मा, रति रोग, गर्भिणी स्त्रियों तथा बालकों के लिये

www.ignited.in

निदानिकाओं (chinics), की स्थापना, बच्चों के लिये दूध के वितरणादि का समावेश होता है।

- **मनश्चिकित्सा**

मानसिक विकारों से उत्पन्न शारीरिक विकारों के लिये यह चिकित्सा होती है। अनेक शारीरिक रोग मानसिक चिकित्सा से दूर हो जाते हैं। इसके लिये ईश्वर पर श्रद्धा रखना , पूजा पाठ पर विश्वास रखना , मनोरजंनार्थ गायन, वादन, रम्य-दृश्य-दर्शन आदि मन को शांत और प्रसन्न रखनेवाले उपाय अच्छे होते हैं।

- **औषधि चिकित्सा**

इसमें विविध ओषधियों का सेवन कराया जाता है। अनेक असाध्य रोगों की अचूक ओषधियाँ आज बन गई हैं और निरंतर बन रही हैं।

- **आहार चिकित्सा**

अनेक रोग , जैसे मधुमेह , बृक्कशोथ, स्थूलता, जठरब्रण इत्यादि आहार से संबंध रखते हैं। इनका निवारण खाद्यों एवं पेयों के नियंत्रण से किया जा सकता है।

- **रसचिकित्सा**

इसमें ऐसे रसद्रव्यों से चिकित्सा की जाती है जो मनुष्य के लिये विषैले नहीं होते, पर रोगाणुओं के लिये घातक होते हैं।

- **अंतरूस्रावी चिकित्सा**

इसमें अंतरूस्राव या संश्लिष्ट अंतरूस्राव द्वारा रोगों का निवारण होता है।

- **यांत्रिक चिकित्सा**

इसमें मालिश , कंपन, विविध व्यायाम , स्वीडीय अंगायाम त्यादि द्वारा चिकित्सा होती है।

- **जीवचिकित्सा**

इसमें सीरम , वैक्सीन, प्रतिविष इत्यादि द्वारा चिकित्सा होती है।

- **अन्य चिकित्साएँ**

इनमें शल्यकर्म , दहन चिकित्सा , विद्युद्वारा चिकित्सा (Electro shock therapy), स्नान चिकित्सा , वायुदाब चिकित्सा (Aerotherapy), सूर्यरश्मि चिकित्सा , (भ्मसपव जीमतंचल) इत्यादि आती हैं।

भारतमें प्रचलित चिकित्सा पद्धतियाँ

भारत में इस समय चिकित्सा की चार पद्धतियाँ प्रचलित हैं

1. ऐलोपैथिक, 2. होमियोपैथिक, 3. आयुर्वैदिक, और 4. यूनानी।

अंग्रेजों के भारत में आगमन के साथ-साथ ऐलोपैथिक पद्धति यहाँ आई और ब्रिटिश राज्यकाल में शासकों से प्रोत्साहन पाने के कारण इसकी जड़ इस देश में जमी और पनपी। आज स्वतंत्र भारत में भी इस पद्धति को मान्यता प्राप्त है और इसके अध्यापन और अन्वेषण के लिये अनेक महाविद्यालय तथा अन्वेण संस्थाएँ खुली हुई हैं। प्रति वर्ष हजारों डाक्टर इन संस्थाओं से निकलकर इस पद्धति द्वारा चिकित्साकार्य करते हैं। देश भर में इस पद्धति से चिकित्सा करने के लिये अस्पताल खुले हुए हैं और उच्च कोटि के चिकित्सक उनमें काम करते हैं।

अंग्रेजों के शासनकाल में ही होमियोपैथिक पद्धति इस देश में आई और शासकों से प्रोत्साहन न मिलने के बावजूद भी यह पनपी। इसके अध्यापन के लिये भी आज अनेक संस्थाएँ देश भर में खुल गई हैं और नियमित रूप से उनमें होमियोपैथी का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। अंग्रेजी शासनकाल में यह राजमान्य पद्धति नहीं थी , किंतु अब इसे भी शासकीय मान्यता मिल गई है।

आयुर्वैदिक पद्धति भारत की प्राचीन पद्धति है। एक समय यह बहुत उन्नत थी , पर अनेक शताब्दियों से मुसलमानों और ब्रिटिश राज्यकाल में शासकों की ओर से प्रोत्साहन के अभाव में इसकी प्रगति रुक गई और यह पिछड़ गई। पर इसकी जड़ इतनी गहरी है कि आज भी देश के अधिकांश व्यक्तियों की चिकित्सा इसी प्रणाली से होती है। भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद आयुर्वेद के अध्ययन में शासन की ओर से कुछ प्रोत्साहन मिल रहा है और वैज्ञानिक आधार पर इसके अध्यापन ओर अन्वेषण के लिये प्रयत्न हो रहे हैं।

यूनानी चिकित्सा पद्धति मुसलमानी शासनकाल में आई और कुछ समय तक मुसलमानी राज्यकाल में पनपी , पर ब्रिटिश शासनकाल में प्रोत्साहन के अभाव में यह शिथिल पड़ गई। फिर भी कुछ संस्थाएँ आज भी चल रही हैं , जिनमें यूनानी पद्धति के पठन पाठन का विशेष प्रबंध है।

स्वदेशी चिकित्सा

भारत मे जिस शास्त्र की मदद से निरोगी होकर जीवन व्यतीत करने का ज्ञान मिलता है उसे आयुर्वेद कहते है ।

www.ignited.in

आयुर्वेद में निरोगी होकर जीवन व्यतीत करना ही धर्म माना गया हैं । रोगी होकर लम्बी आयु को प्राप्त करना या निरोगी होकर कम आयु को प्राप्त करना दोनों ही आयुर्वेद में मान्य नहीं हैं । इसीलिये जो भी नागरिक अपने जीवन को निरोगी रखकर लम्बी आयु चाहते है , उन सभी को आयुर्वेद के ज्ञान को अपने जीवन में धारण करना चाहिए । निरोगी जीवन के बिना किसी को भी ज्ञान की प्राप्ति , सुख की प्राप्ति , धर्म की प्राप्ति नहीं हो सकती हैं । रोगी व्यक्ति किसी भी तरह का सुख प्राप्त नहीं कर सकता है । रोगी व्यक्ति कोई भी कार्य करके ठीक से धन भी नहीं कमा सकता हैं । हमारा स्वस्थ शरीर ही सभी तरह के ज्ञान को प्राप्त कर सकता हैं । शरीर के नष्ट हो जाने पर संसार की सभी वस्तुये बेकार हैं। यदि स्वस्थ शरीर है तो सभी प्रकार के सुखों का आनन्द लिया जा सकता है । दुनिया मे आयुर्वेद ही एक मात्र शास्त्र या चिकित्सा पद्धति है जो मनुष्य को निरोगी जीवन देने की गारंटी देता है ।

अध्ययन के उद्देश्य

1. भारत में स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली और चिकित्सा प्रणाली का अध्य्यन करने के लिए
2. उत्तर बंगाल की चिकित्सा और स्वास्थ्य देखभाल प्रणालियों के इतिहास का अध्य्यन करने के लिए

स्वदेशी (इन्डिजनस) लोगों संस्कृतियों और पर्यावरण

स्वदेशी (इन्डिजनस) लोग अनूठी संस्कृतियों और पर्यावरण से संबंधित तरीकों से चलने वाले लोग हैं। उन्होंने आज के बदलते युग में अपनी सामाजिक , सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक विशेषताओं को बरकरार रखा है। स्वदेशी लोगों और स्थानीय समुदायों की ज्ञान प्रणाली और प्रथाएं हमारी धरती की जैविक और सांस्कृतिक विविधता की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

स्वदेशी लोगों के ज्ञान और अभ्यास की ये प्रणालियां मौखिक तौर पर पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती रहती हैं। इनकी अनूठी संस्कृति , पद्धतियों, स्थान आधारित शिक्षा इनकी प्रमुख विशेषता है।इस विषय को लेकर आगाह किया गया है कि स्वदेशी लोगों और स्थानीय समुदायों के जीवन पर अलग-अलग तरह के दबाव पड़ रहे हैं , जिसके चलते इनके ज्ञान प्रणाली और प्रथाओं को व्यापक नुकसान हो सकता है। इस नुकसान से हमारी धरती की जैविक और सांस्कृतिक विविधता के लिए खतरा पैदा हो सकता है।

इसी बात को आगे बढ़ाते हुए अब साइमन फ्रेजर विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने चिंता व्यक्त की है कि स्वदेशी लोगों और स्थानीय समुदायों की ज्ञान प्रणालियों के नुकसान और विनाश के व्यापक सामाजिक और पारिस्थितिकी परिणाम हो सकते हैं। वैज्ञानिकों ने नीति निर्माताओं और दुनिया भर में लोगों के रूप में , हमें अपनी व्यावसायिक गतिविधियों में , सरकारी एजेंसियों की नीतियों में और अपने व्यक्तिगत विकल्पों में इन प्रयासों को आगे बढ़ाने की आवश्यकता पर जोर देने को कहा है। अध्ययनकर्ता बताते हैं कि कैसे स्वदेशी लोगों और स्थानीय समुदायों की ज्ञान प्रणाली और प्रथाएं हमारी धरती की जैविक और सांस्कृतिक विविधता की रक्षा करने में प्रमुख भूमिका निभाती हैं। वे इस बात का दस्तावेजीकरण भी करते हैं कि सामाजिक और पारिस्थितिकी परिणामों के साथ इस ज्ञान को खतरनाक दरों पर किस तरह नुकसान हो रहा है। यह अध्ययन जर्नल ऑफ एथ्नोबायोलॉजी में प्रकाशित हुआ है।

सह-अध्ययनकर्ता अलवारो फर्नांडीज-लालामारेस ने कहा कि हालांकि स्वदेशी और स्थानीय ज्ञान प्रणालियां स्वाभाविक रूप से अपनाई जाने वाली और उल्लेखनीय रूप से लचीली (रिज़िल्यन्ट) हैं। उनकी नींव औपनिवेशिक समाधान, भूमि अधिग्रहण और संसाधनों के उपयोग के साथ समझौता किया जा रहा है और इस तरह के काम लगातार जारी हैं। इन दबावों के चलते पारिस्थितिकी और सामाजिक तौर पर गहरा और व्यापक प्रभाव पड़ता हैं।

उत्तर बंगाल ब्रिटिश सरकार की भूमिका और रोगों के रोकथाम में पर्यावरणीय कारक

उत्तर बंगाल अपनी भौगोलिक स्थिति के संदर्भ में शेष बंगाल से एक स्पष्ट प्रस्थान था। यह क्षेत्र उच्च पर्वत श्रृंखलाओं, घने जंगलों और बड़ी संख्या में नदियों से समृद्ध था। इस क्षेत्र की जलवायु स्थिति बंगाल के दक्षिणी भाग से काफी भिन्न थी। लंबे पेड़ों की प्रचुरता , ऊँची पहाड़ियों और मिट्टी की नमी ने उत्तर बंगाल की जलवायु विशेषताओं में एक नया आयाम जोड़ा। इस क्षेत्र की हर दिशा में अच्छी संख्या में पहाड़ी नदियाँ बहती पाई गईं।

विभिन्न पहाड़ियों और पहाड़ों से आने वाली विभिन्न धाराओं ने भी उत्तर बंगाल की जलवायु में एक नया रंग डाला। उत्तर बंगाल ने भी अपनी नदी सिंचित प्रकृति , असंख्य दलदलों, घने जंगलों, विस्तृत जंगल, लंबी घास, अत्यधिक वर्षा और अजीबोगरीब जलवायु परिस्थितियों के कारण एक विशिष्ट चरित्र प्राप्त कर लिया था। तापमान , हवा, वर्षा, प्रकाश, मिट्टी की स्थिति, पूरे उत्तर बंगाल में विभिन्न ज्ञात और अज्ञात बीमारियों के फैलने के लिए

www.ignited.in

नदी का प्रवाह, नदी तल की गाद अपरिहार्य जलवायु कारक थे। मानव निर्मित कारणों के अलावा तटबंधों का निर्माण , रेलवे, नालियों, नहरों, फसल पैटर्न में परिवर्तन , प्रकृति के स्वभाव और प्राकृतिक आपदाओं के लिए रोग भी सामने आते हैं। इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य उत्तर बंगाल के विभिन्न कोनों में फैलने वाली बीमारियों के कारणों के लिए जिम्मेदार पर्यावरणीय कारकों को प्रमुखता से लाना है और अन्य महत्वपूर्ण कारकों पर भी ध्यान केंद्रित करना है जो बीमारियों का कारण बनते हैं।

पर्यावरणीय कारक और रोगों के कारण

उत्तर बंगाल के सभी जिलों की मिट्टी अपने चरित्र के समान नहीं थी। कहीं मिट्टी पथरीली या रेतीली , कहीं सूखी या गीली। मिट्टी नीची , समतल या पहाड़ी क्षेत्रों पर भी स्थित थी। एक समय में मिट्टी में धात्विक , उप-धातु या कार्बनिक पदार्थ होते थे। जल और वायु विभिन्न धातु , पौधे और पशु शरीर तत्वों से बने थे। उपमृदा जल और उपमृदा वायु की शुद्धता अनिवार्य रूप से आवश्यक थी। पर्यावरण तब अस्वास्थ्यकारी हो गया जब दोनों में से एक या दोनों में से कोई एक जहरीला था। उप-वायु में कार्बन-डाइऑक्साइड और जल वाष्प बड़ी मात्रा में बने रहे। कभी-कभी दलदली गैस , हाइड्रोजेन सल्फाइड , कार्बनिक पदार्थ , संक्रामक वाष्प और उप-वाष्प जहरीले पदार्थ भी उप-मृदा वायु में प्रचलित थे। उन जहरीले तत्वों ने टाइफाइड, मलेरिया, डिप्थीरिया, बुखार, हैजा, संक्रामक पेचिश आदि को जन्म दिया। मिट्टी के बढ़ते तापमान के साथ उप मिट्टी की हवा ऊपर उठ गई। इस वृद्धि के लिए वातावरण की हवा संक्रामक हो गई। संक्रामक हवा ने बीमारियों को जन्म दिया।

रेतीली, हल्की गंदी और रेतीली , मैला या जलोढ़ मिट्टी के साथ कार्बनिक पदार्थ मिलाए जाने से अस्वास्थ्यकर होता है। इस प्रकार की मिट्टी में पानी की थोड़ी मात्रा वाष्पित हो जाती है और नम और ठंडी हो जाती है और पौधों की एक बड़ी मात्रा में रहने के कारण यह कई तरह से नष्ट हो जाती है। ऐसे में मलेरिया का प्रकोप काफी हद तक संभव था। निचली भूमि जो पौधों से भरी हुई थी , भारी भीग चुकी थी और गीली भूमि अस्वच्छ थी। इस प्रकार की मिट्टी ठंडी और मृत जैविक पौधों से भरी होती थी। दिनाजपुर और रंगपुर के कुछ हिस्सों की मिट्टी इस प्रकार की थी। लेकिन पहाड़ियों की तलहटी की मिट्टी जो आधी सूखी और पौधों से भरी हुई थी, वहाँ हवा का संचार ठीक से नहीं होता था और वहाँ सूरज की रोशनी भी पर्याप्त नहीं थी। तराई की मिट्टी इसी श्रेणी की है। एक आम कहावत थी कि मलेरिया विडम्बनापूर्ण मिट्टी से पैदा होता है

मिट्टी की शुष्कता या नमी के कारण स्वास्थ्य की स्थिति वापस आ सकती है या घट सकती है। नम मिट्टी से विभिन्न प्रकार के रोग जल्दी उत्पन्न हो सकते हैं। नम मिट्टी में जलवाष्प शरीर से वाष्पित नहीं हो पाता था इसलिए जलवाष्प की मात्रा बढ़ जाती थी और अशुद्ध रक्त शरीर में प्रवाहित होने लगता था। इस प्रकार की मिट्टी उत्तर बंगाल में प्रचलित थी। आमतौर पर पहाड़ी क्षेत्र स्वास्थ्य के लिए लगभग अनुकूल थे। क्योंकि वहां धूप पर्याप्त थी और हर जगह ताजी शुद्ध हवा चलती थी। धाराओं से आने वाला पानी पारदर्शी और आसानी से उपलब्ध था और मिट्टी बिल्कुल भी नम नहीं थी। वहां बारिश का पानी हमेशा निचले स्तर पर गिरता था। लेकिन दो पहाड़ियों के बीच तुलनात्मक रूप से कम ऊंचाई की भूमि सबसे अधिक अस्वच्छ थी। पहाड़ी की पसंद स्वास्थ्यकर थी, लेकिन उसकी घाटी तरह-तरह की बीमारियों से भरी हुई थी। जो भूमि समुद्र तल से बहुत अधिक थी , उसका सापेक्ष तापमान और हवा का गुरुत्वाकर्षण उस अनुपात में हल्का था। इस प्रकार ऊँची भूमि सर्द थी और उस अनुपात में उस क्षेत्र की हवा हल्की थी। दार्जिलिंग की मिट्टी उस तरह की थी।

मिट्टी गीली होने पर मलेरिया , सर्दी-खांसी, निमोनिया, गाउट, टाइफाइड, हैजा, डायरिया, डिप्थीरिया आदि कई बीमारियों को जन्म देती थी। मिट्टी , चाक, बलुआ पत्थर से बनी मिट्टी स्वास्थ्यकर थी। इस प्रकार की मिट्टी का पानी जल्दी उतर जाता है और ऊपरी सतह सूख जाती है। हवा सीमित थी और पीने का पानी साफ और शुद्ध बना रहा। रेतीली, हल्की मैली और रेतीली मिट्टी और कार्बनिक पदार्थ मिश्रित जलोढ़ मिट्टी अस्वच्छ थी। उस प्रकार की मिट्टी नम और ठंडी हो गई थी और कम मात्रा में पानी सोख रही थी। यदि उस मिट्टी पर पौधों से भरा उथला तालाब रहता तो मलेरिया के फैलने की काफी संभावना थी। कम, वनस्पति युक्त, पानी से भरी और गीली मिट्टी मृत जैविक पौधों से भरी हुई थी। दिनाजपुर की मिट्टी और रंगपुर का हिस्सा उस विशेष चरित्र के समान था। वह थी मलेरिया पैदा करने वाली मिट्टी। कुछ डॉक्टरों का मत था कि मलेरिया का जहर गीली भूमि से उत्पन्न होता है। जहर उन जमीनों से आया जो बिना फसल उगाए बंजर रह गई थीं। गीली भूमि में पानी पर्याप्त रूप से नहीं निकाला जा सकता था और इस प्रकार उस भूमि में रुका हुआ पानी बढ़ गया जो मलेरिया पैदा करने का एक आदर्श स्थान था। मलेरिया का जहर मानव शरीर को हवा और पानी के जरिए भी संक्रमित कर सकता है।

www.ignited.in

निष्कर्ष

उत्तर बंगाल के स्वदेशी लोगों और अप्रवासी आबादी की चिकित्सा और स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में कुछ अनूठी विशेषताएं थीं जो एक दूसरे के समान नहीं थीं। विभिन्न रोगों को मिटाने के लिए उनकी देवी-देवताओं की भक्ति और पूजा की सामग्री अलग-अलग थी। पुजारी भी विभिन्न जातीय समुदायों में अलग-अलग नामों से परिचित हो गए। कई मामलों में उन्हें अंध विश्वास और अंधविश्वास द्वारा निर्देशित किया गया था। लेकिन इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि कई बार उनकी औषधीय मान्यताओं का वैज्ञानिक आधार भी था। वे ज्यादातर बीमारियों के प्रकोप को रोकने के लिए प्रकृति की पूजा करते थे और जड़ी-बूटियों और झाड़ियों में प्रकृति में अपनी दवाएं भी लेते थे। प्रारंभ में पश्चिमी चिकित्सा पद्धति को उत्तरी बंगाल में यूरोपीय सैनिकों , यूरोपीय चाय बागान मालिकों और ब्रिटिश अधिकारियों की चिकित्सा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पेश किया गया था।

मिट्टी की शुष्कता या नमी के कारण स्वास्थ्य की स्थिति वापस आ सकती है या घट सकती है। नम मिट्टी से विभिन्न प्रकार के रोग जल्दी उत्पन्न हो सकते हैं। नम मिट्टी में जलवाष्प शरीर से वाष्पित नहीं हो पाता था इसलिए जलवाष्प की मात्रा बढ़ जाती थी और अशुद्ध रक्त शरीर में प्रवाहित होने लगता था। इस प्रकार की मिट्टी उत्तर बंगाल में प्रचलित थी। आमतौर पर पहाड़ी क्षेत्र स्वास्थ्य के लिए लगभग अनुकूल थे। क्योंकि वहां धूप पर्याप्त थी और हर जगह ताजी शुद्ध हवा चलती थी। धाराओं से आने वाला पानी पारदर्शी और आसानी से उपलब्ध था और मिट्टी बिल्कुल भी नम नहीं थी। वहां बारिश का पानी हमेशा निचले स्तर पर गिरता था। लेकिन दो पहाड़ियों के बीच तुलनात्मक रूप से कम ऊंचाई की भूमि सबसे अधिक अस्वच्छ थी। पहाड़ी की पसंद स्वास्थ्यकर थी, लेकिन उसकी घाटी तरह-तरह की बीमारियों से भरी हुई थी। जो भूमि समुद्र तल से बहुत अधिक थी , उसका सापेक्ष तापमान और हवा का गुरुत्वाकर्षण उस अनुपात में हल्का था। इस प्रकार ऊँची भूमि सर्द थी और उस अनुपात में उस क्षेत्र की हवा हल्की थी। दार्जिलिंग की मिट्टी उस तरह की थी।

मिट्टी गीली होने पर मलेरिया, सर्दी-खांसी, निमोनिया, गाउट, टाइफाइड, हैजा, डायरिया, डिप्थीरिया आदि कई बीमारियों को जन्म देती थी। मिट्टी, चाक, बलुआ पत्थर से बनी मिट्टी स्वास्थ्यकर थी। इस प्रकार की मिट्टी का पानी जल्दी उतर जाता है और ऊपरी सतह सूख जाती है। हवा सीमित थी और पीने का पानी साफ और शुद्ध बना रहा। रेतीली , हल्की मैली और रेतीली मिट्टी और कार्बनिक पदार्थ मिश्रित जलोढ़ मिट्टी अस्वच्छ थी। उस प्रकार की मिट्टी नम और ठंडी हो गई थी और कम मात्रा में पानी सोख रही थी। यदि उस मिट्टी पर पौधों से भरा उथला तालाब रहता तो मलेरिया के फैलने की काफी संभावना थी। कम , वनस्पति युक्त, पानी से भरी और गीली मिट्टी मृत जैविक पौधों से भरी हुई थी। दिनाजपुर की मिट्टी और रंगपुर का हिस्सा उस विशेष चरित्र के समान था। वह थी मलेरिया पैदा करने वाली मिट्टी। कुछ डॉक्टरों का मत था कि मलेरिया का जहर गीली भूमि से उत्पन्न होता है। जहर उन जमीनों से आया जो बिना फसल उगाए बंजर रह गई थीं। गीली भूमि में पानी पर्याप्त रूप से नहीं निकाला जा सकता था और इस प्रकार उस भूमि में रुका हुआ पानी बढ़ गया जो मलेरिया पैदा करने का एक आदर्श स्थान था। मलेरिया का जहर मानव शरीर को हवा और पानी के जरिए भी संक्रमित कर सकता है।

निष्कर्ष

उत्तर बंगाल के स्वदेशी लोगों और अप्रवासी आबादी की चिकित्सा और स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में कुछ अनूठी विशेषताएं थीं जो एक दूसरे के समान नहीं थीं। विभिन्न रोगों को मिटाने के लिए उनकी देवी-देवताओं की भक्ति और पूजा की सामग्री अलग-अलग थी। पुजारी भी विभिन्न जातीय समुदायों में अलग-अलग नामों से परिचित हो गए। कई मामलों में उन्हें अंध विश्वास और अंधविश्वास द्वारा निर्देशित किया गया था। लेकिन इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है बार उनकी औषधीय मान्यताओं का वैज्ञानिक आधार भी था। वे ज्यादातर बीमारियों के प्रकोप को रोकने के लिए प्रकृति की पूजा करते थे और जड़ी-बूटियों और झाड़ियों में प्रकृति में अपनी दवाएं भी लेते थे। प्रारंभ में पश्चिमी चिकित्सा पद्धति को उत्तरी बंगाल में यूरोपीय सैनिकों, यूरोपीय चाय बागान मालिकों और ब्रिटिश अधिकारियों की चिकित्सा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पेश किया गया था।

संदर्भ सूचि

सैंड्रा अल्बर्ट (2020) ष्पूर्वाेत्तर भारत में स्वदेशी लोगों के बीच चिकित्सा बहुलवाद - स्वास्थ्य नीति के लिए निहितार्थष् खंड 20 संख्या 7 पीपी 952-960 जुलाई 2015

www.ignited.in

आकाश कालरा (2017) भारत में स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं के रूप में चिकित्सा की वैकल्पिक प्रणालियों का उपयोगरू एनएसएस 2014 2017 से आयुष देखभाल पर साक्ष्य ; 12(5)रू ई0176916।

ख्अमलान मजूमदार (2016) उत्तर बंगाल में स्वास्थ्य देखभाल का उपयोगरू एक अंतःविषय ढांचे में स्वास्थ्य की तलाश के पैटर्न का एक अध्ययन जे। समाज. विज्ञान। , 13(1)रू 43-51 (2016)

ठवेबंतपदव श्र. 1996। ष्मरीजों की गुणवत्ता अस्पताल देखभाल और अस्पताल अधिभोग की धारणारू क्या मरीजों की धारणाओं के आधार पर गुणवत्ता देखभाल का आकलन करने के साथ जुड़े पूर्वाग्रह हैं ?ष् इंटरनेशनल जर्नल फॉर क्वालिटी इन हेल्थ केयर, 8(5)रू 467 - 477।

बनर्जी, डी.रू भारत की स्वास्थ्य सेवाओं में स्वदेशी और पश्चिमी चिकित्सा पद्धतियों का स्थान। साइंस एंड मेडिसिन , 15 (ए)रू 109 - 114 (1981)।

चोपड़ा, एल.रू सीजीएचएस के तहत एमसीएच और एफडब्ल्यू सेवाएं देने में भारतीय चिकित्सा प्रणाली और होम्योपैथी के योगदान पर एक अध्ययन। एम. डी. थीसिस (अप्रकाशित), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली (1991)।

चोपड़ा, एस.के.रू द स्टडी ऑफ द कम्युनिटी रिस्पांस टू सिस्टम ऑफ मेडिसिन। पीएचडी थीसिस (अप्रकाशित) , जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली (1980)।

डार, एस.के.रू ए स्टडी ऑन कॉमन हेल्थ प्रॉब्लम्स अमंग मेल एडोलसेंट्स एंड हेल्थ सर्विसेज यूटिलाइजेशन बाय देम इन अ अर्बन स्लम ऑफ दिल्ली। एम. डी. थीसिस (अप्रकाशित), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली (1995)।

धर आर.रू दिल्ली में चयनित अस्पतालों में मातृत्व बिस्तरों के उपयोग को प्रभावित करने वाले कारकों का एक अध्ययन। एम. डी. थीसिस (अप्रकाशित) , दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली (1979)।

डोनबेडियन, ए.रू एक्सप्लोरेशन इन क्वालिटी असेसमेंट एंड मॉनिटरिंग। वॉल्यूम। 1. स्वास्थ्य प्रशासन प्रेस , एन आर्बर (1980)।

हंस, पी.एन.रू ग्रामीण समुदाय द्वारा आयुर्वेदिक चिकित्सा देखभाल की धारणा और उपयोग। एम. डी. थीसिस (अप्रकाशित), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली (1980)।

ब्मसपा, ल्. और क्. त्. भ्वजबीापेेए 2000. ष्तुर्की में मातृ स्वास्थ्य देखभाल उपयोग के सामाजिक आर्थिक निर्धारक।ष् सामाजिक विज्ञान और चिकित्सा , 50(12)रू 1797 - 1806ऋ\

Corresponding Author

Amit Kumar*

Research Scholar Department of Humanity Capital University Jharkhan